

इलाहाबाद उच्च न्यायालय
लखनऊ
विशेष अपील दोषपूर्ण संख्या – 31/2016

उ.प्र. राज्य द्वारा प्रमुख सचिव, परिवहन विभाग, लखनऊ एवं 2 अन्य
बनाम

ज्ञान प्रकाश
... प्रत्यर्थी (गण)

अपीलकर्ता (गण) के अधिवक्ता: – मुख्य स्थायी अधिवक्ता

प्रत्यर्थी (गण) के अधिवक्ता :- सुरेश कुमार उपाध्याय, मनीष मणि शर्मा

न्यायालय संख्या – 1

माननीय न्यायमूर्ति राजन रॉय

माननीय न्यायमूर्ति अबधेश कुमार चौधरी

(सिविल प्रकीर्ण आवेदन सं. 8116 / 2016)

- विशेष अपील दाखिल करने में हुई विलंब क्षमा हेतु शपथपत्र द्वारा समर्थित आवेदन प्रस्तुत किया गया है।
- हमने राज्य के विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता और प्रतिवादियों के विद्वान अधिवक्ता को सुना।
- अपील दाखिल करने में 8 माह और 17 दिन का विलंब हुआ है। विलंब को क्षमा नहीं किया गया है। हम इस तथ्य पर ध्यान नहीं दे सके और इसलिए, दिनांक 30.04.2024 का आदेश अनवधानतावश पारित कर दिया।
- परिसीमा अधिनियम, 1963 की धारा 3 और माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **शिवम्मा (मृत) बनाम कर्नाटक हाउसिंग बोर्ड और अन्य** के मामले में दिए गए हालिया निर्णय (2025 एससीसी ऑनलाइन 1969) के अनुसार, मामले के गुण-दोष पर विचार करने से पूर्व, सर्वप्रथम विलंब पर विचार करना अनिवार्य है।
- तदनुसार, हम विशेष अपील दाखिल करने में हुए विलंब क्षमा हेतु आवेदन पर विचार करने के लिए आगे

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है एवं इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी एवं सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

कार्यवाही करते हैं।

6. यह विशेष अपील राज्य द्वारा इलाहाबाद उच्च न्यायालय नियमावली, 1952 के अध्याय VIII नियम V के अंतर्गत दायर की गई है, जिसमें रिट याचिका संख्या 7976 (एस/एस) 2006; ज्ञान प्रकाश बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य में पारित निर्णय और आदेश दिनांक 06.04.2015 को चुनौती दी गई है।

7. रिपोर्ट के अनुसार, विशेष अपील दायर करने में 8 माह और 17 दिन का विलंब हुआ है। इलाहाबाद उच्च न्यायालय नियमावली, 1952 के अध्याय VIII नियम 5 के अंतर्गत ऐसी अपीलें दाखिल करने की विहित समय सीमा, नियमावली, 1952 के अध्याय IX नियम 10 सहपठित परिसीमा अधिनियम, 1963 की अनुसूची के अनुच्छेद 117 के अंतर्गत 30 दिन है।

8. विलंब क्षमा के आवेदन के समर्थन में प्रस्तुत शपथपत्र में कहा गया है कि आक्षेपित निर्णय अपीलकर्ताओं के कार्यालय में दिनांक 10.04.2015 को प्राप्त हुआ था और दिनांक 10.04.2015 को निर्णय प्राप्त होने के बाद, दिनांक 05.05.2015 को राज्य सरकार को विशेष अपील दाखिल करने की अनुमति मांगने के लिए एक विस्तृत पत्र लिखा गया था। राज्य सरकार ने अपने पत्र दिनांक 02.06.2015 के माध्यम से उत्तर प्रदेश के परिवहन आयुक्त को विधिक राय लेने के लिए कहा। उपरोक्त तथ्य स्वयं इस बात का संकेत देते हैं कि अपीलकर्ताओं ने मामले पर कितने शिथिल और लापरवाहीपूर्ण रीति से कार्रवाई की। दिनांक 10.04.2015 को विवादित निर्णय प्राप्त होने के बाद, राज्य सरकार को विशेष अपील दायर करने की अनुमति के लिए अनुरोध भेजने में ही 25 दिन लग गए। राज्य सरकार ने उत्तर प्रदेश के परिवहन आयुक्त को लखनऊ उच्च न्यायालय के विद्वान मुख्य स्थायी अधिवक्ता से विधिक राय लेने के लिए कहने में ही लगभग एक माह व्यतीत कर दिया, यानी लगभग दो माह का समय मात्र इसी मामूली कार्य में लग गया। विद्वान मुख्य स्थायी अधिवक्ता ने दिनांक 14.07.2015 को अर्थात् लगभग डेढ़ माह बाद अपनी विधिक राय प्रदान की। यह विधिक राय दिनांक 29.07.2015 के पत्र के माध्यम से राज्य सरकार को पुनः प्रेषित की गई, अर्थात् राय दिए जाने के 15 दिन बाद, जो राज्य अधिकारियों की ओर से किसी भी प्रकार की तत्परता या उद्यम को नहीं दर्शाती है। अंततः अनुमति दिनांक 28.08.2015 को प्रदान की गई, जो दिनांक 29.07.2015 के पत्र जारी होने के लगभग एक माह बाद प्रदान की गई थी, जो एक बार पुनः राज्य अधिकारियों द्वारा मामले में अपनाई गई लापरवाही को दर्शाती है, जिसमें अपील दायर करने की कोई तत्परता नहीं प्रदर्शित की गई। इसके बाद भी, अपील दाखिल करने के संबंध में माननीय मुख्य स्थायी अधिवक्ता को निर्णय

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है एवं इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी एवं सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

की सूचना देने में ही लगभग 20 दिन व्यतीत हो गए, यानी 18.09.2015 को, जब पत्रावली राज्य विधि अधिकारी को सौंपी गई, जिन्होंने 'पैरोकार' को यह सूचित करने में लगभग एक सप्ताह का समय लिया कि कुछ दस्तावेजों की आवश्यकता है, जिसका अर्थ यह है कि अपील तैयार करने के लिए माननीय मुख्य स्थायी अधिवक्ता को अपूर्ण दस्तावेज उपलब्ध कराए गए। उन दस्तावेजों को एकत्रित करने में लगभग डेढ़ माह का समय लगा, जो विद्वान मुख्य स्थायी अधिवक्ता को दिनांक 16.11.2015 को ही उपलब्ध कराए गए थे। इसके बाद ही अपील तैयार की गई और उसका प्रारूप बनाया गया। वास्तव में अपील दिनांक 13.01.2016 को दायर की गई, अर्थात् राज्य के अधिवक्ता को दस्तावेज सौंपे जाने के लगभग दो माह बाद। शपथपत्र में इस तथ्य का कोई उल्लेख नहीं है कि अपीलकर्ताओं/राज्य अधिकारियों ने उच्च न्यायालय में अपने अधिवक्ता से इस मामले पर आगे कार्यवाही करने के लिए कोई प्रयास किया था या नहीं, ताकि अपील शीघ्रातिशीघ्र दायर की जा सके। वास्तव में, शपथपत्र में किए गए कथनों के समर्थन में कोई दस्तावेजी प्रमाण संलग्न नहीं किया गया है, जिसमें वैसे भी 8 माह और 17 दिन की अत्यधिक विलंब का पर्याप्त स्पष्टीकरण नहीं है। हमने उपरोक्त स्पष्टीकरण की जांच माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **शिवम्मा (मृत) (उपरोक्त)** मामले में घोषित हालिया निर्णय के आधार पर की है।

9. हमने **शिवम्मा (मृत) (उपरोक्त)** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा घोषित हालिया निर्णय का अध्ययन किया है, जिसमें विलंब क्षमा और संबंधित बिन्दुओं के संबंध में विधि को स्पष्ट किया गया है। अपील दाखिल करने की परिसीमा अवधि तीस दिन है, लेकिन आवेदन के समर्थन में प्रस्तुत शपथपत्र में इस अवधि के लिए शायद ही कोई स्पष्टीकरण दिया गया है। कम से कम, यह संतोषजनक नहीं है। परिसीमा अवधि समाप्त होने के बाद की अवधि के संबंध में भी शायद ही कोई स्वीकार्य स्पष्टीकरण दिया गया है। सर्वोच्च न्यायालय ने **शिवम्मा (मृत) (उपरोक्त)** मामले में यह धारित किया है कि "पर्याप्त कारण" शब्द लापरवाहीपूर्ण एवं पुराने दावों पर बल देने की समस्या का कोई रामबाण इलाज नहीं है। इस शब्द की व्याख्या न्यायोचित लचीलेपन के साथ की जानी चाहिए ताकि निर्दोष वादियों को उन परिस्थितियों के लिए दंडित न किया जाए जो उनके नियंत्रण से बाहर थीं। न्यायालयों को घोर लापरवाही, आशयपूर्ण निष्क्रियता या उदासीनता को क्षमा नहीं करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से "मुकदमेबाजी के अंत में राज्य का हित है" के सिद्धांत का हनन होगा एवं परिसीमा विधि द्वारा सुनिश्चित की जाने वाली निश्चितता अस्थिर हो जाएगी। "पर्याप्त कारण" शब्द का निर्वचन इस प्रकार किया जाना चाहिए जिससे परिसीमा के अनुशासन को बनाए रखते हुए तात्त्विक न्याय अग्रसर हो। न्यायालयों को सहानुभूति या तकनीकी कठोरता से प्रभावित नहीं होना चाहिए, बल्कि इस बात का विवेकपूर्ण मूल्यांकन करना चाहिए कि क्या आवेदक ने

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है एवं इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी एवं सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

उपचार प्राप्त करने में युक्तियुक्त तत्परता बरती है। जहां स्पष्टीकरण वास्तविक, तर्कसंगत एवं सामान्य मानवीय आचरण के अनुरूप है, वहां न्यायालयों ने विलंब क्षमा करने का रुख अपनाया है। जहां लापरवाही, सद्भावना की कमी या शिथिलतापूर्ण दृष्टिकोण स्पष्ट है, वहां विलंब क्षमा से इनकार कर दिया गया है। अपीलकर्ताओं ने युक्तियुक्त तत्परता नहीं प्रदर्शित की है एवं न ही उनके द्वारा दिया गया स्पष्टीकरण तर्कसंगत एवं सामान्य मानवीय आचरण के अनुरूप है। उपरोक्त कारणों से उनकी ओर से लापरवाही, सद्भावना का आभाव एवं शिथिलतापूर्ण दृष्टिकोण प्रकट होता है।

10. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह टिप्पणी भी की है कि न्यायालयों को यह ध्यान रखना चाहिए कि वाद का गुणदोष के आधार पर सशक्त होना विलंब क्षमा का आधार नहीं है। जब विलंब क्षमा के लिए न्यायालय के समक्ष आवेदन प्रस्तुत किया जाता है, तो जांच मात्र इस बात तक सीमित होती है कि क्या अपील या कार्यवाही को निर्धारित समय सीमा के अंतर्गत दाखिल न करने का "पर्याप्त कारण" दर्शित किया गया है। अन्तर्निहित वाद के गुणदोष का इस जांच से कोई भी संबंध नहीं है। यदि न्यायालय इस स्तर पर मामले की योग्यता पर विचार करेंगे, तो इससे प्रारंभिक प्रक्रियात्मक प्रश्नों एवं वास्तविक निर्णय के बीच की सीमाएं धुंधली हो जाएंगी, जिससे न्यायिक जांच के दो भिन्न चरण परस्पर मिश्रित हो जाएंगे। परिसीमा अधिनियम की धारा 5 का उद्देश्य यह निर्धारित करना नहीं है कि दावा विधिक या तथ्यात्मक रूप से सशक्त है या नहीं, बल्कि मात्र यह निर्धारित करना है कि क्या आवेदक के पास विलंब का उचित कारण था। "पर्याप्त कारण" की कसौटी को मामले के गुणदोष की जांच से प्रतिस्थापित नहीं किया जा सकता है। विलंब क्षमा, विलंब के स्पष्टीकरण पर आधारित विवेकाधिकार का मामला है, न कि वाद में सफलता की संभावनाओं पर। यदि वाद की विशेषताओं पर विचार किया जाए, तो सशक्त वाद के वादी को लापरवाही के बावजूद क्षमा प्रदान की जा सकती है, जबकि दुर्बल मामले को पर्याप्त कारण बताए जाने के बाद भी खारिज किया जा सकता है। इससे विधि का असमान एवं असंगत अनुप्रयोग होगा, जिससे परिसीमा के सिद्धांत द्वारा स्थापित एकसमान मानक का हनन होगा। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विलंब क्षमा के चरण में गुण-दोष पर विचार न करने का एक एवं व्यावहारिक कारण बताया है, वह यह है कि इससे मामले की प्रारंभिक सुनवाई से पूर्व ही न्यायालय का किसी एक पक्ष के विरुद्ध पूर्वाग्रह उत्पन्न होने की आशंका रहती है। गुण-दोष पर समय से पूर्ण विचार करने से न्यायालय अनजाने में ऐसा मत बना सकता है जो बाद में निर्णय की निष्पक्षता को प्रभावित कर सकता है। इस स्तर पर न्यायिक अनुशासन की यह अपेक्षा है कि मात्र विलंब के कारण की ही जांच की जाए, इससे अधिक कुछ नहीं। इसलिए, हम इस स्तर पर मामले के गुण-दोष पर विचार नहीं कर सकते।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है एवं इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी एवं सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

11. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इस पर भी विचार किया कि क्या परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के अंतर्गत राज्य की शिथिलता एवं निष्क्रियता के लिए कोई रियायत दी जा सकती है। इस विषय पर विभिन्न पूर्व निर्णयों पर विचार करने के बाद, अंततः न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि '**पोस्टमास्टर जनरल बनाम लिविंग मीडिया इंडिया लिमिटेड' (2012) 3 एससीसी 563** वाद के निर्णय से पूर्व, विलंब क्षमा के मामलों में राज्य एवं उसके संस्थानों के प्रति न्यायिक सहानुभूति का दृष्टिकोण अपनाया जाता था, क्योंकि उनके कार्यव्यवहार की प्रकृति विशिष्ट थी। साथ ही, इसके विपरीत मत भी उपलब्ध थे, जैसे '**पश्चिम बंगाल राज्य बनाम एडमिनिस्ट्रेटर, हावड़ा नगर पालिका' (1972) 1 एससीसी 366** एवं '**लंका वेंकटेश्वरलू (डी) बनाम आंध्र प्रदेश राज्य एवं अन्य' (2011) 4 एससीसी 363** वादों में यह माना गया कि चाहे वादी सरकारी संस्था हो या निजी व्यक्ति, परिसीमा के प्रावधान समान रूप से लागू होंगे एवं न्यायालयों द्वारा प्रदान की जाने वाली रियायत भी समान रहेगी। **पोस्टमास्टर जनरल (उपरोक्त)** के निर्णय के बाद वर्तमान विधि स्पष्ट एवं असंदिग्ध है। विलंब की क्षमा अपवाद रहेगी, नियम नहीं। सरकारी वादियों को भी, निजी पक्षों की भांति, विलंब के लिए वास्तविक, पर्याप्त एवं ठोस कारण दर्शित करना होगा। ऐसे औचित्य के अभाव में, मात्र आवेदक की पहचान के आधार पर विलंब को क्षमा नहीं किया जा सकता। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह टिप्पणी भी की है कि '**राजस्थान राज्य एवं अन्य बनाम बाल किशन माथुर (मृत) द्वारा विधिक प्रतिनिधि' (2014) 1 एससीसी 592** एवं '**शिव राज सिंह बनाम भारत संघ' (2023) 10 एससीसी 531** के संयुक्त अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि पोस्टमास्टर जनरल (उपरोक्त) का निष्कर्ष मूलतः द्विस्तरीय है। पहला, परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के अंतर्गत विलंब क्षमा से संबंधित मामलों में राज्य या उसके किसी भी निकाय से वरीयतापूर्ण व्यवहार नहीं किया जा सकता। राज्य का मूल्यांकन किसी भी निजी वादी के समान, उन्हीं मानकों के आधार पर किया जाना चाहिए। अन्यथा, परिसीमा की शुचिता से समझौता होगा। दूसरे, सरकारी विभागों द्वारा विलंब क्षमा मांगने के आधार के रूप में नौकरशाही की लालफीताशाही, प्रक्रियात्मक अड़चनों या प्रशासनिक अक्षमताओं पर बार-बार निर्भर रहना, परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के प्रयोजन के लिए सदैव "पर्याप्त कारण" के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। यदि ऐसे कारणों को सामान्य रूप से स्वीकार कर लिया जाए, तो परिसीमा विधि द्वारा लागू किया जाने वाला अनुशासन ही अशक्त हो जाएगा, जिसके परिणामस्वरूप मुकदमों में अंतहीन अनिश्चितता उत्पन्न होगी। हमने उक्त निर्णय के अन्य भागों, जिनमें प्रस्तर 214 एवं अनुवर्ती भाग सम्मिलित हैं, का अध्ययन किया है। हमें यह विलंब को क्षमा करने और समय सीमा बढ़ाने के लिए उपयुक्त मामला प्रतीत नहीं होता।

12. तदनुसार, विशेष अपील दाखिल करने में विलंब क्षमा हेतु आवेदन अस्वीकृत किया जाता है।

अस्वीकरण:- अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है एवं इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी एवं सरकारी उद्देश्यों के लिए निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



13. परिणामस्वरूप, विशेष अपील भी खारिज की जाती है।

(न्यायमूर्ति अबधेश कुमार चौधरी) (न्यायमूर्ति राजन रॉय)

19 जनवरी, 2026

आर.के.पी.

Translated version. Not for legal use.